नींबूवर्गीय फल – उत्पादन एवं परिरक्षण

लक्ष्यवीर सिंह बैनीवाल, राजेन्द्र कुमार गोदारा, हवा सिंह सहारण
रणवीर सिंह सैनी एवं रमेश कुमार गोयल

विस्तार शिक्षा निदेशालय
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय
हिसार–125 004 (हरियाणा)

उद्धरण
लक्ष्यवीर सिंह बैनीवाल, राजेन्द्र कुमार गोदारा, हवा सिंह सहारण, रणवीर सिंह सैनी एवं रमेश कुमार गोयल. 2007. नींबूवर्गीय फल - उत्पादन एवं परिरक्षण, बुलेटिन संख्या (20), विस्तार शिक्षा निदेशालय, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार।

आवरण पृष्ठ
किन्नू का पौधा

लेखक
लक्ष्यवीर सिंह बैनीवाल, वरिष्ठ जिला विस्तार विशेषज्ञ (बागवानी), कृषि विज्ञान केन्द्र, सिरसा
राजेन्द्र कुमार गोदारा, वरिष्ठ विस्तार विशेषज्ञ (बागवानी), चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार
हवा सिंह सहारण, वरिष्ठ जिला विस्तार विशेषज्ञ (पौध रोग), कृषि विज्ञान केन्द्र, सिरसा
रणबीर सिंह सैनी, वरिष्ठ जिला विस्तार विशेषज्ञ (बागवानी) कृषि विज्ञान केन्द्र, झज्जर
रमेश कुमार गोयल, वैज्ञानिक बागवानी, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

संपादक
कृष्णा हुड्डा, सह-प्राध्यापिका (हिन्दी), चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार
आर. पी. बंसल, सह-निदेशक (प्रकाशन), चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

इस पुस्तक के प्रकाशन हेतु भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्यिगिकी मन्त्रालय के जैव प्रौद्यिगिकी विभाग द्वारा प्रदत वित्तीय सहायता अधीन "हिसार तथा सोनीपत जिले के गांवों में डी.बी.टी. (जै.प्रौ.वि.) ग्रामीण जैव-संसाधन संकुल" की विशिष्ठ परियोजना के अन्तर्गत आर्थिक सहायता प्रदान की है।

इस प्रकाशन में प्रस्तुत की गई सामग्री और लिए गए पदनाम किसी भी रूप में चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार के विचारों की अभिव्यक्ति नहीं है तथा किसी भी देश, क्षेत्र, शहर और इलाके या उसके अधिकारियों या सीमाओं और सीमान्त प्रदेशों की सीमांकन की कानूनी स्थिति से संबंधित नहीं है। जहां कहीं भी ट्रेड नामों का इस्तेमाल किया गया है, उसे किसी की पुष्टि या किसी के प्रति भेदभाव नहीं समझा जाना चाहिए।

विस्तार शिक्षा निदेशक
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

प्राक्कथन

विश्व-व्यापारीकरण व सघन खेती से उपजी समस्याओं को ध्यान में रखकर व कृषि में विविधीकरण लाने के लिए देश में बागवानी का बहुमुखी विकास आज समय की मांग है और यह सब हरियाणा सरकार की किसानोन्मुखी नीतियों, मेहनतकश किसान तथा चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों के सांझा योगदान से सम्भव हो सकता है।

यह जानकर बहुत अच्छा लगा कि कृषि वैज्ञानिकों ने '**नींबूवर्गीय फल-उत्पादन एवं परिरक्षण**' नामक पुस्तक का प्रकाशन किया है। इस सराहनीय व महत्वपूर्ण प्रयास के लिए ये बधाई के पात्र हैं।

आज के वैज्ञानिक युग में किसानों ने कृषि के क्षेत्र में चहुँमुखी प्रगति की है फिर भी बागवानी एक ऐसा विषय है जिस पर अभी और ध्यान देने की आवश्यकता है। बहुत पहले से यह महसूस किया जा रहा था कि नींबूवर्गीय फलों की बागवानी को प्रोत्साहन देने के लिए इस विषय से सम्बन्धित सम्पूर्ण वैज्ञानिक जानकारी सरल भाषा (हिन्दी) के माध्यम से आम ग्रामीण कृषक तक पहुंचें जिससे न केवल प्रगतिशील किसान अपितु मध्यमवर्गीय एवं सीमांत किसान भी इसका पूरा लाभ उठा सके।

यह पुस्तक लिखते हुए विशेष रूप से यह ध्यान रखा गया है कि नींबूवर्गीय फलों की पूरी वैज्ञानिक जानकारी किसानों को उपलब्ध हो। मुझे आशा है कि इस पुस्तक से किसान भाई अत्याधिक लाभान्वित होंगे।

(राम कंवर मलिक)

भारत को नींबूवर्गीय फलों का घर माना जाता है। यहां इस वर्ग की विभिन्न प्रजातियां मिलती हैं। इस वर्ग की महत्वपूर्ण प्रजातियों में नींबू (Lime), लेमन (Lemon), माल्टा (Sweet Orange), सन्तरा (Mandarin) एवं ग्रेपफ्रूट (Grape fruit) आदि जातियों की व्यावसायिक खेती की जाती है।

फलों में नींबूवर्गीय फलों का महत्वपूर्ण स्थान है। भारत में इसका क्षेत्रफल 98,234 हैक्टेयर से भी अधिक आंका गया है। हमारे देश में कुल 6% क्षेत्र में बागवानी होती है। भारत में नींबू प्रजातीय फलों का तीसरा प्रमुख स्थान है। भारत में इन फलों की खेती उपोष्ण जलवायु वाले क्षेत्रों जैसे हरियाणा, पंजाब, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, आसाम व अरूणाचल प्रदेश में मुख्य रूप से की जाती है।

हरियाणा प्रदेश के सिरसा, फतेहाबाद, हिसार, भिवानी, जींद, गुड़गांव, फरीदाबाद आदि जिलों में इन फलों की व्यावसायिक खेती सफलतापूर्वक की जा रही है। वर्ष 2005-06 के आंकड़ों के अनुसार हरियाणा प्रदेश में नींबूवर्गीय फलों का कुल क्षेत्रफल 5041 हैक्टेयर व उत्पादन 69558 टन आंका गया है। बढ़ती हुई जनसंख्या व मांग को देखते हुए नींबूवर्गीय फलों का उत्पादन बहुत कम है। अतः इसका क्षेत्रफल व उत्पादन बढ़ाने के लिए प्रदेश सरकार ने विशेष अभियान चला रखा है। इस प्रजाति के प्रमुख फल माल्टा व किन्नू की व्यवसायिक खेती सिरसा जिले के डबवाली व ऐलनाबाद क्षेत्र में प्रमुखता से की जा रही है।

स्वास्थ्य की दृष्टि से नींबूवर्गीय फल मनुष्य के लिए अत्यन्त लाभदायक हैं। नींबूवर्गीय फलों में विटामिन 'सी' भरपूर मात्रा में पाया जाता है। इन फलों में विटामिन 'सी' के अलावा विटामिन 'ए', विटामिन 'बी' तथा खनिज तत्व भी अच्छी मात्रा में पाए जाते हैं। अतः यह फल स्वास्थ्य की दृष्टि से आरोग्यकारी व पौष्टिकता से भरपूर हैं।

उन्नत किस्में :

नींबूवर्गीय फलों की सफल बागवानी के लिए सही किस्म का चुनाव महत्वपूर्ण है। हमारे देश से नींबूवर्गीय फलों का किस्मों के अनुसार उत्पादन क्षेत्रों से उपभोक्ता क्षेत्रों को भारी पैमाने पर परिवहन होता है। अतः इन फलों के एक निश्चित उपयोग हेतु निम्नलिखित किस्में उपलब्ध हैं जिनका चुनाव किसान भाई आगामी बाजार की मांग को ध्यान में रखकर कर सकते हैं।

माल्टा : इसके फलों का छिल्का गुद्दे से चिपका हुआ होता है। इसलिए इसे अग्रेजी में 'टाइट स्किन ऑरेंज' भी कहते है। संतरे की तरह इसके छिल्के को आसानी से नहीं हटाया जा सकता तथा इसके अन्दर की फाँको को भी संतरे की तरह अलग-अलग नहीं किया जा सकता।

इस वर्ग की किस्मों का विवरण निम्नलिखित है :-

ब्लडरेड : इस वर्ग में ब्लडरेड एक प्रमुख किस्म है। फल मध्यम आकार का व उपर से चिपका हुआ होता है। फलों का गूदा पकने पर लाल नारंगी हो जाता है। फल स्वादिष्ट व बढ़िया किस्म का होता है। फल की लम्बाई 6.5-7.0 सैं.मी. और चौड़ाई 7.0-7.5 सैं.मी. होती है। औसतन फल वजन 150-200 ग्राम, रस की मात्रा 30-40 प्रतिशत, कुल घुलनशील तत्व (मिठास) 10-12 प्रतिशत, खटास 0.6 प्रतिशत व बीज की औसत संख्या 9-10 प्रतिफल होती है। उपज 60-65 क्विंटल प्रति एकड़ होती है।

मौसमी : इसका फल चिकना जिसके उपर लम्बाई में धारियां तथा तले पर चवन्नी की छाप जैसी छल्ले की आकृति बनी हुई होती है। मौसमी का फल अत्यंत गुणकारी व पौष्टिक होने के कारण बच्चों व बीमार व्यक्तियों को विशेष रूप से रस के रूप में दिया जाता है। फल छोटे से मध्यम आकार का जिसकी लम्बाई 6.07 सैं.मी. व चौड़ाई

6.25 सैं.मी. होती है। फल पकने पर गहरे पीले रंग के हो जाते है जिनमें रस की मात्रा 30-35 प्रतिशत होती है। कुल घुलनशील तत्व (मिठास) 10-12 प्रतिशत व खटास केवल 0.25 प्रतिशत होती है। यह किस्म नवम्बर माह में पकती है। उपज 35-40 क्विंटल प्रति एकड़ होती है।

जाफा : फल का आकार गोल, लम्बाई 6.37 सैं.मी. और चौड़ाई 6.51 सैं.मी. होती है। फल पकने पर गहरे पीले रंग की फाड़ियों के साथ अच्छी तरह जुड़ा हुआ होता है। औसतन फल वजन 140-190 ग्राम, रस की मात्रा 30-35 प्रतिशत, कुल घुलनशील तत्व (मिठास) 9-10 प्रतिशत व बीज की संख्या 5-10 प्रतिफल होती है। फल नवम्बर माह में पकता हैं। फल उत्पादन 50-55 क्विंटल प्रति एकड़ होता है।

पाइन एप्पल : इसके फलों में रस ज्यादा होता है तथा इसका स्वाद अम्लीयता व मिठास मिश्रित होता है। इसका फल मध्यम से बड़े आकार का और शक्ल में लम्बा गोल होता है। फल की लम्बाई 5.75 सैं.मी. से 6.75 सैं.मी. होती है। पकने पर फल का रंग नारंगी होता है। औसत फल वजन 125 से 175 ग्राम, रस की मात्रा 35-40 प्रतिशत, खटास 0.6 प्रतिशत व मिठास (कुल घुलनशील तत्व) 9-10 प्रतिशत होता है। बीज की संख्या 10-12 प्रति फल व फल उत्पादन 55-60 क्विंटल प्रति एकड़ होता है।

सन्तरा

किन्नो : यह अधिक उत्पादन देने वाली शंकर किस्म है जिसे संयुक्त राज्य अमेरिका में किंग ऑरेंज और बिलो लीफ ऑरेंज के संकरण से विकसित किया गया है। किन्नो का रस रक्त वृद्धि, हड्डियों की मजबूती तथा पाचन में लाभकारी होता है। इसमें खटास व मिठास का अच्छा सन्तुलन है। फल का छिलका मोटा तथा गूदे से चिपका हुआ होता है परन्तु इसे संतरे की तरह गूदे से आसानी से अलग किया जा सकता है। किन्नो का फल संतरे से बड़े आकार का होता है। फल मध्यम, गोल, चपटापन लिए हुए नारंगी रंग के व फल का वजन 125-175 ग्राम होता है। पकने पर छिलका नर्म व चमकदार तथा गूदा गहरा नारंगी पीला, रस 40-45 प्रतिशत, सुगन्ध बहुत अच्छी, घुलनशील तत्व (मिठास) 9-12 प्रतिशत व खटास 0.75 से 1.2 प्रतिशत होता है। फल जनवरी माह में पकता है। उत्पादन 80-100 क्विंटल प्रति एकड़ है।

नींबू

कागजी कला : फल गोल, वजन 75-80 ग्राम, पकने पर रंग पीला, छिलका पतला, नर्म, गूदा रस से भरा हुआ, खटास 6.3 प्रतिशत और कुल घुलनशील तत्व (मिठास) 7 प्रतिशत होती है। विटामिन 'सी' 32 मिलीग्राम प्रति 100 मि.ली. रस में व इसका उत्पादन 55 किलो प्रति पौधा होता है।

बारामासी : फल मध्यम गोल तथा थोड़े चपटे आकार के जिनका औसत वजन 80 ग्राम प्रतिफल होता है। छिलका पतला (2.04 सैं.मी.), रस की मात्रा 45 प्रतिशत, कुल घुलनशील तत्व (मिठास) 7 प्रतिशत व खटास 3-5 प्रतिशत होती है। फल पकने का समय जुलाई से अगस्त व फरवरी से मार्च होता है। फसल 55-60 किलोग्राम प्रति पौधा (जुलाई-अगस्त) होती है।

मीठा नींबू

किस्म लोकल : फल गोल, मध्यम आकार, छिलका बहुत चिकना पतला और विभिन्न प्रकार की सुगंध आती है। इस फल की कोई विशेष किस्म नहीं है। नये पौधों को बनाते समय यह अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि उन्हीं पौधों से चश्मा लिया जाए जिन पर अधिक फल आते हों। क्योंकि इस फसल में काफी भिन्नता पाई जाती है। औसत फल का वज़न 100-150 ग्राम, छिलका 0.2-0.3 सैं.मी., रस की मात्रा 45-50 प्रतिशत, कुल घुलनशील तत्व (मिठास) 7.5 प्रतिशत, खटास 0.07 प्रतिशत तथा विटामिन 'सी' की मात्रा 50-60 मि.ग्रा. प्रति 100 मि.ली. रस में होती है। फसल 300-500 फल प्रति वृक्ष होती है।

ग्रेपफ्रूट

मार्श सीडलैस : फल बड़े आकार का, चपटा गोल, लम्बाई और चौड़ाई 10-11 सैं.मी., छिलका हल्का पीले रंग का, फल का औसत वजन 500-600 ग्राम, रस 28-30 प्रतिशत, कुल घुलनशील तत्व (मिठास) 7.7 प्रतिशत तथा खटास 1.2-1.4 प्रतिशत, विटामिन सी 40-45 मि.ग्रा. प्रति 100 मि.ली. रस में होता है। फल दिसम्बर-जनवरी में पकता है। फसल 50-55 क्विंटल प्रति एकड़ है।

डंकन : फल मध्यम से बड़े आकार के गोल, चपटे, हल्के पीले रंग के जिनकी लम्बाई 9-10 सैं.मी. और चौड़ाई 10-11 सैं.मी., औसत फल वजन 400-500 ग्राम, जिसके छिलके की मोटाई 0.80 से 0.90 सैं.मी. होती है। रस की मात्रा 80 प्रतिशत और घुलनशील तत्व (मिठास) 9-11 प्रतिशत, खटास 1.3-1.4 प्रतिशत और विटामिन सी 45-50 मि.ग्रा./100 मि.ली. रस में होता है। यह नवम्बर-दिसम्बर माह में पकता है व इसका उत्पादन 24-28 क्विंटल प्रति एकड़ है।

रूबी रैड : फल मध्यम से लम्बे आकार के, छिलका पकने पर पीले रंग का गुलाबी धब्बोंयुक्त होता है। औसत वजन 500-550 ग्राम प्रति फल। फल की लम्बाई 9-10 सैं.मी. और चौड़ाई 10-11 सैं.मी., छिलके की मोटाई 0.8-0.85 सैं.मी.। रस 30 प्रतिशत जिसमें कुल घुलनशील तत्व (मिठास) 10-11 प्रतिशत और खटास 1.2-1.4 प्रतिशत और विटामिन सी 50-55 मि.ग्रा. प्रति 100 मि. ली. रस में होता है। फसल 32-36 क्विंटल प्रति एकड़, जो नवम्बर में पककर तैयार हो जाती है।

वानस्पतिक प्रवर्धन

भूमि एवं जलवायु को देखते हुए तथा ओजस्विता एवं फलन व अच्छे उत्पादन के लिए उपयुक्त मूलवृन्त लेकर उस पर सम्बन्धित किस्म का उपरोपण किया जाता है। किन्नू व माल्टा के लिए कलिकायन उपयुक्त प्रवर्धन विधि है। इन किस्मों के बीजू पौधों से वांछित सफलता नहीं मिलती। नींबू व लेमन में प्रवर्धन बीज एवं वानस्पतिक विधि दोनों ही प्रकार से किया जाता है। वनस्पतिक विधि में गूटी, दाब लगाना तथा कलम विधि प्रयोग में लाई जा सकती है।

जटी खट्‌टी मूलवृन्त

मूलवृन्त का महत्व :

किसी भी खास किस्म का फल लगाने से पहले यह देखना आवश्यक है कि उस क्षेत्र की भूमि एवं जलवायु कैसी है। उसी के अनुसार मूलवृन्त का चयन करते हैं। अलग-अलग क्षेत्रों के लिए भिन्न-भिन्न किस्म के मूलवृन्त की सिफारिश की जाती है। एक मूलवृन्त सभी स्थानों के लिए उपयुक्त नहीं रहता। अनुचित मूलवृन्त पर कलिकायन करने से नये वृक्ष शीघ्र ही नष्ट हो सकते हैं। उन पर फलों की मात्रा कम लगती है तथा फलों का आकार अच्छा नहीं होता। कीट व्याधि का प्रकोप भी अधिक होता है जिससे भण्डारण क्षमता घट जाती है।

लम्बे अरसे के अनुसंधान के नतीजों के आधार पर यह कहना न्यायसंगत है कि हरियाणा में माल्टा एवं ग्रेपफ्रूट चश्में के लिए कलियोपैटरा संतरा मूलवृन्त के लिए अच्छा सिद्ध हुआ है। इस मूलवृन्त में अधिक उपज, अच्छी गुणवता व रोगरोधी गुण हैं।

मूलवृन्त तैयार करना :

गोबर की खाद डालकर सुविधानुसार क्यारियाँ बना लें। इनके बीच में पानी पहुंचाने तथा अधिक पानी के निकास के लिए 50 सैं.मी. चौड़ी नाली छोड़ दें। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 15 सैं.मी. रखते हुए कतारों में 5 सैं.मी. की दूरी पर एक सैं.मी. गहराई पर बीज की बुवाई पर मिट्टी से ढँक दें। बुवाई से क्यारी में उचित नमी होनी चाहिए।

बुवाई के तत्काल बाद फव्वारों से हल्का पानी दें ताकि बीज पर्याप्त नमी पाकर शीघ्र अंकुरित हो सकें। बीज के ऊपर मिट्टी की पपड़ी नहीं बननी चाहिए। बुवाई के 3-4 सप्ताह बाद अंकुरण हो जाता है तथा अक्तूबर तक छोटे पौधे जमीन पर नजर आने लगते हैं। इन छोटे पौधों को शीत लहर व पाले से बचाने के लिए सूखी घास का छप्पर बनाकर रात को ढँक दें तथा दिन में हटा लें। समय-समय पर सिंचाई व निराई-गुड़ाई करते रहें। 3-4 पंक्तियां आने पर नाइट्रोजन की हल्की मात्रा डालकर सिंचाई कर दें।

मूलवृन्त की रोपाई :

जब ये पौध 25 सैं.मी. उंची के तथा आधा सैं.मी. चौड़ी हो जाये तो क्यारियों में इसे नर्सरी में लगा देते हैं। कतार से कतार का फासला 3/4 से 1 मीटर तथा इनमें पौधे की दूरी 25 सैं.मी. रखनी चाहिए, इससे पौधों को बढ़ने के लिए पर्याप्त स्थान मिल जाता है। साथ ही उन पर कलिकायन करने में सुविधा रहती है। परन्तु इन क्यारियों में भी अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद डाली हुई होनी चाहिए तथा मिट्टी की खुदाई करके मिट्टी पर्याप्त भुरभुरी बना लेनी चाहिए।

इसके बाद उपर्युक्त बताये फासले पर पौध लगा कर सिंचाई कर दें। क्यारियों से पौध उठाने से पूर्व उनमें पानी दे देना चाहिए ताकि उनको मिट्टी के साथ उठाने में सुविधा रहे तथा उनकी जड़ों को कोई नुकसान नहीं पहुंचे। पौधों की रोपाई बसंत या वर्षा ऋतु में करें।

कलिकायन या चश्मा लगाना :

एक वर्ष का मूलवृन्त जो एक सैं.मी. व्यास का (एक पैन्सिल जितना मोटा), 25 सैं.मी. लम्बा, स्वस्थ निरोग और 10 पत्तों वाला पौधा कलिकायन के लिए उपयुक्त रहता है। कली उस समय लगानी चाहिए जब पौधों में रस का संचार पूरी तरह हो। मार्च या अगस्त का महीना इस हेतु उपयुक्त समय है। अब संस्थापित चयनित एवं उपयुक्त मातृ वृक्ष से कलियां लेकर उन्हें मूलवृन्त पर बिठा दें। नींबू वर्ग में टी-बडिंग तरीका काम में लिया जाता है। मूलवृन्त पर टी के आकार का कट देकर उस स्थान पर आँख बिठा कर ऊपर से एल्काथिन से बांध दिया जाता है। कली लगाने के 2-3 सप्ताह बाद कली फूटने लगती है। जब यह कली 5 सैं.मी. लम्बी हो जाती है तथा इसमें कुछ छोटी-छोटी पत्तियां निकल आती हैं तो यह पौधा उन पर हावी होने

लगता है। उस समय कलिकायन के स्थान के ऊपर से मूलवृन्त का भाग तेज चाकू से काट दें। इस प्रकार नया पेड़ तैयार हो जाता है। अब एल्काथिन की पट्टी भी हटा दें। नर्सरी में बताये अनुसार देखभाल करते रहना चाहिए। कली लगाने के करीब 8 माह बाद ये पौधे रोपाई योग्य हो जाते हैं। कली कोमल शाखा की नहीं चुननी चाहिए। कलिकायन हेतु कली शाखा के मध्य से लेनी चाहिए। कलिकायन के लिए फूली हुई कक्ष कलिका लेनी चाहिए जिसकी वर्तमान मौसम में वृद्धि हुई हो तथा परिपक्व हो गई हो। ऐसी शाखाएं गोलाकार, कम कांटों वाली तथा विषाणु रोगों से मुक्त होनी चाहिए।

धरातल :

जहां तक संभव हो समतल खेत का चयन करना चाहिए। यदि खेत समतल नहीं है तो संस्थापना से पूर्व समतल कर लेना चाहिए। सिंचाई एवं पानी निकासी सुविधाएं अवश्य होनी चाहिए। बाजार में आवश्यकता एंव यातायात की सुविधाओं के अनुसार ही उद्यान का आकार रखें।

जलवायु :

इस वर्ग के फलों की खेती शुष्क उपोष्ण जलवायु वाले क्षेत्रों जहां पर सर्द तथा ग्रीष्म ऋतु हो तथा बरसात कम हो अच्छी रहती है। शुष्क तथा सूखा मौसम जहां गर्मियों में गर्मी व सर्दियों में सर्दी होती है तथा वर्षा अपेक्षाकृत कम होती है, इस वर्ग के लिए उपयुक्त रहती है। औसत वर्षा 50-60 सैं.मी. होनी चाहिए परन्तु सिंचाई का उचित प्रबंध होना आवश्यक है। अतः इसके लिए पालारहित कम आर्द्रता वाली जलवायु उपयुक्त रहती है।

भूमि :

इस वर्ग के फलों के लिए गहरी जल निकास वाली दोमट व उपजाऊ भूमि जिसमें 2 मीटर की गहराई तक किसी प्रकार की सख्त तह नहीं हो उपयुक्त रहती है। इसके लिए क्षारीयपन (पी.एच.) 8.5, चूना कंकर 10 प्रतिशत, कैल्शियम कार्बोनेट 5 प्रतिशत व विद्युत चालकता 0.5 मिली/म्होज/सैं.मी. (1 मिट्टी 2 पानी)से कम उपयुक्त मानी जाती है। भूमि में पानी की सतह बिना घटे-बढ़े 3 मीटर की गहराई से नीचे होनी चाहिए।

मिट्टी परीक्षण :

नींबूवर्गीय बाग लगाने से पूर्व मिट्टी की जांच करवाना अति आवश्यक है क्योंकि पौधों में भूमि की दशाओं का अत्याधिक प्रभाव पड़ता है। अतः निम्नलिखित विधि द्वारा मिट्टी की जांच करवाएं।

- मिट्टी के नमूने उपरी 15 सैं.मी., 15 से 30 सैं.मी., 30 से 60 सैं.मी., 60 से 90 सैं.मी., 90 से 120 सैं.मी., 120 से 150 सैं.मी. और 150 से 200 सैं.मी. की तह से लें।
- मिट्टी का नमूना लेते समय जमीन में पाई जाने वाली कंकर की तह की गहराई व मोटाई अवश्य अंकित करें और इसका नमूना अलग से लें।
- मिट्टी के प्रत्येक नमूने पर नमूना नम्बर व नमूने की गहराई अवश्य लिखें। प्रत्येक नमूने को अलग-अलग साफ-सुथरे कपड़े की थैलियों में रखें व मिट्टी परीक्षण करवाएं।

निशानदेही व गड्ढ़ों की तैयारी :

इस प्रजाति के पौधे लगाने से पूर्व गर्मियों में (अप्रैल-जून) नींबू व किन्नू के लिए 5-6 मीटर की दूरी (कतार से कतार व पौधे से पौधा) तथा माल्टा व ग्रेपफ्रूट के लिए 7 मीटर की दूरी पर गड्ढ़ें खोदने का कार्य करें। उपर्युक्त दूरी पर पौध लगाने से पौधों की संख्या नींबू व किन्नू 156-110 तथा माल्टा व ग्रेपफ्रूट 90 पौधे प्रति एकड़ रहेगी। बाग का रेखांकन करने के बाद प्रत्येक पौधे के

लिए 1 x 1 x 1 मीटर व्यास के गड्ढ़ों की खुदाई की जाती है। गड्ढ़ों की खुदाई का कार्य अप्रैल-जून में करना चाहिए। इस समय गड्ढ़े खोद कर एक महीने के लिए खुले छोड़ देते हैं जिससे उनमें अच्छी तरह धूप लग जाए व उनका निर्जीवीकरण हो जाए। गड्ढ़ा खोदते समय गड्ढ़ें की ऊपरी आधी मिट्टी एक तरफ तथा नीचे की आधी मिट्टी दूसरी तरफ रखनी चाहिए। जून माह के मध्य में इस खुदी हुई उपरी मिट्टी में 30-40 किलोग्राम गोबर की खाद, 50 ग्राम क्लोरोपायरीफॉस धूल मिलाकर गड्ढ़ें को भर देते हैं। गड्ढ़ा भरते समय मिट्टी अच्छी तरह दबा देनी चाहिए तथा गड्ढ़ा धरातल से 15-20 सें.मी. उठा हुआ होना चाहिए। गड्ढ़ा भरने के बाद एक सिंचाई करनी चाहिए अथवा वर्षा ऋतु तक इसी प्रकार छोड़ देना चाहिए। जब एक-दो वर्षा हो जाए और गड्ढ़ों की मिट्टी बैठ जाए, उस समय रोपण का कार्य करते हैं। यदि गड्ढ़ों की मिट्टी अधिक बैठ गई है तो अलग से मिट्टी डालकर गड्ढ़ें को धरातल के बराबर भर देना चाहिए। यदि बाग लाल चिकनी मिट्टी में लगाना हो तो बराबर की बालू रेत या यमुना की रेत अच्छी तरह मिलाकर गड्ढ़ा भर दें।

पौधे खरीदते समय सावधानियां :

उद्यान की सफलता बहुत हद तक अच्छे फल-वृक्षों के चुनाव पर आधारित है। फलदार पौधे लगाने के लिए पौधों को किसी विश्वसनीय नर्सरी से स्वयं जाकर खरीदना चाहिए। पौधे खरीदते समय यह ध्यान देना चाहिए कि पौधे औसत लम्बाई के हो, कलम बांधने के बाद कम से कम एक वर्ष तक पौधशाला में रखे गए हो तथा वे रोग तथा कीट से मुक्त हों। पौधों को निकालते समय इस बात का ध्यान रखना चाहए कि उनकी जड़ों को कोई क्षति न पहुंचे।

पौधे लगाने का समय व ढंग :

नींबूवर्गीय पौधों को लगाने के लिए फरवरी-मार्च तथा अगस्त-अक्तूबर का समय अति उपयुक्त है। पौधों को लगाने से पहले मिट्टी की पिण्डी से लिपटी हुई घास को अलग कर देते हैं। घास हटाते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि मिट्टी के गोले को कोई हानि न पहुंचे। पौधों को उतनी ही गहराई पर लगाया जाना चाहिए जितना

गहरा पौधा नर्सरी में लगा था। पौधों को बिल्कुल सीधा लगाना चाहिए ताकि उनकी जड़ें स्वाभाविक अवस्था में रहे। पौधों को किसी ठण्डे दिन या सांयकाल रोपना चाहिए और यदि आवश्यकता हो तो पौधों को सहारा देना चाहिए। पौधा लगाने के बाद तेज धूप तथा शुष्क हवा से बचाने का प्रबंध करना चाहिए। पौधा लगाकर तुरन्त सिंचाई करें।

नए पौधों की सुरक्षा :

नए पौधों की आरम्भ में लू तथा पाले से बचाना आवश्यक है। शुरू में छोटे पौधों में आवश्यकतानुसार 3-5 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करनी चाहिए। पौधों के आस-पास खरपतवार न उगने दें। आवश्यकतानुसार पौधों में कांट-छांट करते रहें तथा उनको हानिकारक कीटों व विभिन प्रकार के रोगों से बचाने के लिए उचित रसायनों का छिड़कांव करें।

वायुरोधक :

वायुरोधक वृक्षों की पंक्ति बाग की उस सीमा पर लगा देनी चाहिए जिस ओर से ठण्डी, गर्म और तेज हवाओं की संभावना हो। प्राय: वायुरोधक पौधे पश्चिम व उत्तर दिशा

में लगाए जाते हैं। वायुरोधक पौधों के रूप में जामुन, बीजू आम, शहतूत, बेलगिरी व शीशम आदि पौधों को लगाया जा सकता है। फलदार पौधों को आवारा पशुओं से बचाने के लिए चारों ओर करोंदा की बाड़ लगाना भी लाभदायक सिद्ध हुआ है।

सिंचाई :

नींबूवर्गीय फलों में उपयुक्त सिंचाई का बहुत महत्व है। अधिक पैदावार व अच्छी बढ़ोतरी के लिए सही समय पर सिंचाई करना बहुत आवश्यक है। फलधारण करना व फलों का झड़ना दोनों ही सही ढंग व सही समय की सिंचाई पर निर्भर करता है। पौधों व फलों की बढ़वार के समय सिंचाई न करने से पौधों की बढ़ोतरी व फलों की पैदावार व गुणवता पर अत्यधिक विपरीत असर पड़ता है। अतः पौधों में नई पत्ती निकलने से पहले अर्थात् फरवरी-मार्च में, फलों की बढ़ोतरी के समय अर्थात् अप्रैल से जुलाई में और सितम्बर से अक्तूबर के अंत में सिंचाई करना अति आवश्यक है।

सिंचाई की कमी होने पर पौधों की वृद्धि रूक जाती है। फूल व फल झड़ जाते हैं तथा फल फट जाते हैं। सिंचाई पेड़ों की उम्र व मिट्टी की किस्म व सिंचाई विधि पर निर्भर करती है। गर्मियो में 7-10 दिन के अंतर पर व सर्दियों में 15 से 20 दिन के अंतर पर सिंचाई करनी चाहिए। नींबूवर्गीय पौधों में ज्यादा पानी देना भी हानिकारक हो सकता है। सिंचाई फूल खिलने से एक माह पूर्व बन्द कर देनी चाहिए परन्तु फल बनने के तुरन्त बाद हल्की सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। साधारणतया पूर्ण विकसित बाग में खुला पानी दिया जाता है परन्तु पौधों की आयुअनुसार

थांवले कम या ज्यादा चौड़े बनाकर सिंचाई करने से पानी की बचत की जा सकती है। नवरोपित पौधों के एक मीटर व्यास के थांवल (घेरा) में सिचाई करें परन्तु पौधों की आयुअनुसार थांवले का आकार बढ़ा दें।

खाद तथा उर्वरक :

नींबू प्रजाति के पेड़ों को हर वर्ष नियमित रूप से खाद व उर्वरक देते रहना चाहिए। खाद व उर्वरक नीचे दी गई सारणी के अनुसार डालनी चाहिए। फलदार पौधों में वृद्धि तथा फलन हेतु पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। फल-वृक्षों में सक्रिय वृद्धि के समय नाइट्रोजन का प्रयोग करना चाहिए। नाइट्रोजन की आधी मात्रा सक्रिय वृद्धि के

अत्यधिक पैदावार से नाइट्रोजन की कमी

समय से पहले फरवरी में तथा आधी मात्रा अप्रैल में दी जाती है। पौधों में गोबर की खाद, फास्फोरस, पोटाश व जिंक का प्रयोग सुप्तावस्था (फुटाव शुरू होने से पहले, दिसम्बर) में किया जाता है। अधिक मात्रा में खाद व पानी देने से फूल झड़ जाते हैं व फल नहीं बन पाते। बाग में मध्यंतर फसल उगाने की स्थिति में अतिरिक्त खाद की आवश्यकता होती है।

नाइट्रोजन की कमी

लोहे की कमी

लोहा व मैगनीज की कमी

विभिन्न प्रयोगों द्वारा यह ज्ञात हुआ है कि इन वृक्षों की जड़े वृक्षों के फैलाव के नीचे अपना जाल बिछाये रहती है और इन्हीं जड़ों में उर्वरकों का सदुपयोग करने की क्षमता होती है। खाद एवं उर्वरकों को वृक्ष के मुख्य तने के समीप अधिक मात्रा में देने का कोई विशेष महत्व नहीं है, क्योंकि अधिक सक्रिय जड़ें पौधे की परिधि के समीप स्थित रहती है, अतः इनको पौधे के फैलाव के नीचे प्रयोग किया जाना चाहिए। नींबूवर्गीय फलों की जड़े गहरी नही जाकर सतह से कुछ नीचे ही फैलती है। लगभग 80-90 प्रतिशत जड़े भूमि की 25 सैं.मी. सतह में तथा तने से 120 सैं.मी. व्यास की परिधि में रहती हैं। खाद डालने के उपरान्त अच्छी गुड़ाई करके हल्की सिंचाई करनी चाहिये।

सूक्ष्म पोषक तत्वों का प्रयोग :

यह पाया गया है कि जमीन में खाद डालने की तुलना में पर्णीय छिड़काव से पोषक तत्वों का अधिक प्रभावी

आयु (वर्ष)	गोबर की खाद (कि.ग्रा.)	किसान खाद (कि.ग्रा.)	सिंगल सुपर फास्फेट (कि.ग्रा.)	म्यूरेट आफ पोटाश (ग्राम)	जिंक सल्फेट (ग्राम)
1.3	5-20	¼-¾	¼-½	75	50
4.6	25-50	1-1½	½-1	125	100
7.9	60-90	1½-2	1¼-1½	150	150
10 और उससे अधिक	100	2 . 4	2	175	150

- गोबर की खाद, सिंगल सुपर फास्फेट और म्यूरेट ऑफ पोटाश दिसम्बर के अंत में डालें।
- आधी किसान खाद मध्य फरवरी में और आधी अप्रैल में डालकर सिंचाई करें।
- मई-जून और फिर अगस्त-सितम्बर में 0.5 प्रतिशत (5 ग्राम/लीटर पानी) जिंक सल्फेट और 1 प्रतिशत (10 ग्राम/लीटर पानी) यूरिया पौधों पर छिड़कें।
- खाद पौधों के तने से 30 सैंटीमीटर दूर और पौधे के फैलाव तक डालें। इसके पश्चात अच्छी तरह गुड़ाई करके सिंचाई करें।
- नाइट्रोजन तत्व यूरिया खाद के रूप में डालें तो यूरिया को किसान खाद की आधी खुराक करके डालें।

लोहा व जिंक की कमी

अवशोषण होता है। नाइट्रोजन व सूक्ष्म पोषक तत्वों का पत्तियों द्वारा अवशोषण अच्छा होता है। छिड़काव विधि से पोषक तत्वों की कमी के लक्षण प्रकट होने के बाद शीघ्र ही तत्व की कमी को दूर किया जा सकता है। फलदार पौधों के लिए सूक्ष्म पोषक तत्व के रूप में जस्ता, लोहा, बोरोन तथा मैगनीज की आवश्यकता थोड़ी मात्रा में होती है। यही थोड़ी मात्रा पौधों की वृद्धि को अधिक प्रभावित करती है। अतः इन तत्वों की पूर्ति पणीय छिड़काव द्वारा की जा सकती है। पणीय छिड़काव में मुख्य अथवा सूक्ष्म तत्वों का घोल बनाकर छिड़काव किया जा सकता है।

छिड़काव में सावधानियां :

- छिड़काव सुबह के समय ओस सूखने के बाद करें।
- अच्छे परिणामों के लिए घोल में उपयुक्त चिपकने वाला पदार्थ जैसे टीपाल रसायन या सर्फ के घोल का प्रयोग करना चाहिए।
- छिड़काव के समय हवा शांत हो व आने वाले 10-12 घण्टे तक वर्षा की संभावना न हो।
- सूक्ष्म तत्वों की सांद्रता का विशेष ध्यान रखा जाए, वरना अधिक होने पर पत्तियां जलने का भय रहता है।
- फूल खिले होने की अवस्था में छिड़काव न करें। ऐसा करने से फूल झड़ जाते हैं या फूलों के प्रागकण धुल जाते हैं, जिससे फल नहीं बन पाते।

कटाई-छंटाई :

नींबूवर्गीय पौधों में स्वाभाविक कटाई-छंटाई की आवश्यकता नहीं है परन्तु फलों को तोड़ने के बाद सूखी व कीट बीमारी ग्रस्त टहनियों को काटना अति आवश्यक है। पौधों का अच्छा ढांचा बनाने के लिए नर्सरी से ही पौधों को उचित आकार दें। रोपाई के बाद कलिकायन किये गये भाग के नीचे कोई शाखा नहीं पनपने दें तथा जोड़ के स्थान तक साफ रखें। आरम्भिक वर्षों में पौधों को उपयुक्त आकार देने के लिए इनकी छंटाई करनी चाहिए। कटाई-छंटाई इस प्रकार करें कि आधा मीटर तक तने पर शाखायें नहीं हों तथा इसके ऊपर पौधों को संतुलित आकार देते हुए टहनियां विकसित होने दें। फल आना शुरू होने के बाद कटाई-छंटाई नहीं करें। एक शाखा को दूसरी शाखा पर नहीं जाने देना चाहिए। साथ ही जलांकुर (वाटर स्प्राउट्स), रोगी टहनियों, आड़ी-तिरछी और सूखी हुई टहनियों को भी हटाते रहना चाहिए ताकि पेड़ों को अच्छी धूप मिल सके। जलांकुर पौधों के लिए अनुपयोगी तो है ही, उल्टा पौधे की शक्ति को भी क्षीण करते हैं। व्यर्थ में

वाटर शूट्स

ही पानी, खुराक, हवा व रोशनी लेते हैं जिससे उत्पादक टहनियों को कम खुराक मिलती है तथा इन पर फल-फूल नहीं लगते। अतः इन्हें हटाना आवश्यक है। नींबू वर्ग की यह विशेष समस्या है तथा दिसम्बर माह इनको हटाने का अधिक अनुकूल समय है। इन वाटर शूट्स को फल उत्पादक टहनियों से आसानी से पहचाना जा सकता है। वाटर शूट्स बिल्कुल सीधे 90 डिग्री के कोण में खड़े निकलते हैं। इनमें कांटे ज्यादा बड़े व नुकीले होते हैं। इनकी पत्तियां अधिक हरी व मोटी होती हैं परन्तु इन पर फल नहीं आता, अतः इन्हें हटाते रहें। अगर वाटर शूट्स एक पौधे पर ज्यादा मात्रा में हों तो उनको उपर से 1/3 भाग काट देने पर दो वर्ष बाद ये शाखाएं भी फल देना आरम्भ कर देगी।

अन्तः फसलीकरण :

पेड़ों में फल आना शुरू होने तक नींबूवर्गीय पेड़ों के बीच में कोई उपयुक्त फसल ले लेनी चाहिए। दलहनी फसलें या सब्जियां लेना अधिक उपयुक्त है, परन्तु बेलदार सब्जियां लेना उचित नही है। मूंग, सोयाबीन, मटर, धनिया, मेथी आदि उगाना लाभदायक है। गाजर, मूली, टमाटर, बैंगन तथा मिर्च भी ले सकते हैं। मध्यंतर फसलें लेने से खेत में निराई-गुड़ाई व खुदाई होती रहती है जो कि बाग के लिए उपयुक्त रहती है परन्तु अत्यधिक सिंचाई वाली सब्जियां नहीं लेनी चाहिए।

चने की अन्तःफसल

रोग :

नींबूवर्गीय पौधों में फूल आने से फल पकने तक पौधों एवं फलों पर विभिन्न प्रकार की बीमारियों का आक्रमण होता है। यदि इस समय में इनका वैज्ञानिक ढंग से नियंत्रण नहीं किया जाए तो पैदावार में काफी नुकसान होता है। अतः पौधों से स्वस्थ फल एवं अच्छी उपज लेने के लिए बीमारियों की जानकारी एवं इनका समय से उपचार अति आवश्यक है।

नींबू का कैंकर (नींबू का कोढ़) :

इस बीमारी का प्रकोप अधिकतर नींबू के पत्तों व फलों पर पाया जाता है। लेकिन अब किन्नौं के पौधों के पत्तों पर भी पाया गया है। यह रोग बैक्टिरिया के माध्यम से खासकर डबवाली क्षेत्र में फैलता है। इससे प्रभावित पौधों की पत्तियां या फलों पर भूरे रंग के खुरदरे फटे हुए कार्कनुमा धब्बे बन जाते हैं। पत्तियां पीली पड़कर सूखने लगती हैं। इस बीमारी से ग्रस्त फलों का मूल्य कम हो जाता है।

किन्नो पर नींबू का कैंकर

इस रोग से प्रभावित पौधों की टहनियों को काटकर, एकत्रित करके जला देना चाहिए। इस बीमारी से निजात पाने के लिए रोगरहित पौधे ही उगाने चाहिए। इस रोग की रोकथाम के लिए जिन दिनों पानी न बरसे उन दिनों 0.3 प्रतिशत (3 ग्राम दवा/लीटर पानी) कापर ऑक्सीक्लोराइड का छिड़काव करें। अक्तूबर-नवम्बर के महीने में 10 ग्राम स्ट्रैप्टोसाइक्लिन और 10 ग्राम कापर सल्फेट को 500 लीटर पानी में बने घोल का छिड़काव करें।

टहनीमार रोग :

इस रोग से प्रभावित पौधों की टहनियां ऊपर से सूखनी शुरू हो जाती हैं। कभी-कभी बड़ी टहनियां भी सूख जाती हैं और फल व तने भी गल सकते हैं। परिणामस्वरूप पौधा कमजोर होकर मृत हो सकता है।

रोग से ग्रस्त टहनियों को सूखे भाग से 2-3 इंच नीचे से काटना चाहिए एवं कांट-छांट के बाद 0.3 प्रतिशत कापर ऑक्सीक्लोराइड (3 ग्राम दवा/लीटर पानी) या 10 ग्राम स्ट्रेप्टोलाइक्लिन और 10 ग्राम कापर सल्फेट को 500

कटें हुए भाग पर ब्लाईटोक्स का लेप

लीटर पानी में बने घोल से तीन छिड़काव करें। पहला छिड़काव अक्तूबर में, दूसरा दिसम्बर में व तीसरा फरवरी में करें अथवा 50 मि.ग्रा. प्लांटामाइसिन और 2 ग्राम ब्लाइटोक्स को प्रति लीटर पानी की दर से जुलाई, अक्तूबर, दिसम्बर व फरवरी में छिड़काव करें।

गोंद निकलने का रोग (पौध गलन) :

इस रोग से ग्रस्त पौधों के तनों पर भूमि के पास वाले भाग में गोंद जैसा द्रव बूंदों के रूप में निकलने लगता है। इससे तने की छाल सूखकर फटने लगती है। इसके अधिक प्रकोप से

पौधा सूखना प्रारम्भ हो जाता है। पौधे के तने के पास मिट्टी चढ़ायें ताकि तने का पानी के साथ सीधा सम्पर्क न हो सके। पौध गलन या गोंद निकलने वाले भागों को कुरेद कर साफ करें व बोर्डो पेस्ट लगायें और फिर एक सप्ताह बाद बोर्डो पेंट लगायें या ब्लाईटोक्स की लेई बनाकर लगायें।

तने व फल का गलना :

सबसे पहले पत्तों, टहनियों और फलों पर बाहर से पीले रंग के गोल धब्बे पड़ जाते हैं। बाद में ये धब्बे ऊपर को उभरकर खुरदरे व हल्के भूरे रंग के हो जाते हैं। धब्बों के बाहर वाला पीला रंग खत्म हो जाता है और पत्तों व फल की सतह कागज की तरह हो जाती है।

बरसात की पहली बौछार के तुरन्त बाद 0.3 प्रतिशत कापर ऑक्सीक्लोराइड (3 ग्राम दवा/लीटर पानी) का छिड़काव करें।

सूत्रकृमि रोग :

पौधों के पत्ते व टहनियां ऊपर से सूखने लगती हैं तथा सूखकर ऊपर से नीचे की तरफ बढ़ती जाती है। कमजोर पौधों पर छोटे फलों का लगना तथा फलों का समय से पहले गिर जाना आम लक्षण है। जड़ों की आकार विकृति तथा मिट्टी के कणों के अच्छी तरह जड़ों के चिपके रहने से मटमैला रंग हो जाता है। अधिक प्रकोप से जड़ों की खाल उतर जाती है तथा काले मटमैले धब्बे भी दिखाई देते हैं।

फरवरी के महीने में कार्बोफ्यूरान (फयुराडान 3-जी) के दाने 13 ग्राम प्रति वर्ग मीटर की दर से पौधों के तनों के आसपास 9 वर्गमीटर क्षेत्र में (117 ग्राम प्रति पौधा) अच्छी

तरह मिलाएं तथा प्रचुर मात्रा में पानी दें। दवा का प्रयोग फूल आने से पहले करें या नीम की खली 1 किलोग्राम प्रति पौधा एवं कार्बोफ्यूरान के दाने 7 ग्राम प्रति वर्गमीटर की दर से पौधे के तने के आस-पास के 9 वर्गमीटर के क्षेत्र में (63 ग्राम प्रति पौधा) अच्छी तरह मिलाएं तथा तुरंत प्रचुर मात्रा में पानी दें।

मोटल लीफ (जस्ते की कमी) :

जिंक की कमी से पूर्ण विकसित पत्तों में पीलेपन को 'मोटल लीफ' कहते हैं। कोमल शाखाओं की सबसे ऊपर वाली पत्तियां छोटी हो जाती हैं। टहनियां सूखनी शुरू हो जाती हैं। फूल कम लगता है। जिंक की कमी को पूरा करने के लिए 0.5 प्रतिशत (5 किलो जिंक सल्फेट + 2.5 कि.ग्रा. बुझा हुआ चूना या 10 किलोग्राम यूरिया 1000 लीटर पानी में घोलकर) मई-जून और अगस्त-सितम्बर में पौधों पर छिड़काव करें। इसी प्रकार नाइट्रोजन (नत्रजन) की कमी को पूरा करने के लिए (1-2) प्रतिशत यूरिया (10-20 कि.ग्रा. यूरिया 1000 लीटर पानी में) का ऊपर लिखे समय पर छिड़काव करें।

जिंक की कमी से पत्तों का छोटा होना

समस्याएं :

टहनियों का सूखना :

इस समस्या के अन्तर्गत पौधों की टहनियां ऊपर से नीचे की ओर सूखनी शुरू हो जाती हैं। इसलिए इसे टहनीमार रोग से भी जाना जाता है। पौधों की बढ़वार शुरू के 5-6 वर्ष तक बहुत अच्छी होती है लेकिन बाद में टहनियां सूखने की समस्या से पौधों की बढ़वार रूक जाती है। इस समस्या में पौधे पीले रंग के होकर बौने दिखाई देते हैं। टहनियां सूखने लगती हैं। फल पकने से पहले ही गिरने लगते हैं। पौधों की खुराक वाली जड़े मरकर काली हो जाती हैं। सभी पौधे इस समस्या से प्रभावित हो जाते हैं या फिर कुछ पौधों में ही यह समस्या बनी रहती है। इस समस्या के निम्नलिखित कारण हो सकते हैं।

- यह रोग कई प्रकार की फफूंद द्वारा होता है जैसे कोलेटोट्राइकम, डिप्लोडिया, फोमोप्सिस इत्यादि।
- बाग में पानी के निकास न होने से खुराक लेने वाली

तन से छाल का उतरना

टहनी का ऊपर से सूखना

जड़ों के प्रभावित होने से भी यह रोग हो सकता है।

- भूमि में सख्त तह होने से जड़े खुराक नहीं ले सकती व पौधों की बढ़वार रूक जाती है।
- पोषक तत्वों मुख्यत: जिंक की कमी से पौधे पीले होकर सूखने शुरू हो जाते हैं।
- बाग का खराब रखरखाव, अत्यधिक अन्त: फसलीकरण, अत्यधिक व कम सिंचाई से यह समस्या और भी बढ़ जाती है।
- कीट पतंगों व बिमारियों की सही समय पर रोकथाम न होने से इस समस्या को बढ़ावा मिलता है।

अत: इस समस्या के समाधान के लिए बाग में सही जल निकास, समन्वित खादों का प्रयोग, कीड़े व बिमारियों का सही समय पर उपचार व सिंचाई प्रबन्धन अति आवश्यक है। रोगग्रस्त टहनियों की 2-3 इंच नीचे काटछांट के उपरांत 0.3 प्रतिशत कापरऑक्सीक्लोराइड या 10 ग्राम स्ट्रैप्टोसाइक्लिन और 10 ग्राम कॉपर सल्फेट को 500 लीटर पानी में घोलकर तीन छिड़काव जो अक्तूबर, दिसम्बर व फरवरी के महीनों में करने चाहिए।

फलों का गिरना :

नींबू प्रजातीय पौधों में फलों के झड़ने व गिरने की गम्भीर समस्या है। आमतौर पर पौधों में फूल व फल खूब बनते हैं लेकिन केवल 7-8 प्रतिशत फूल ही सही फल के रूप में विकसित हो पाते हैं। माल्टा की मौसमी व बल्डरैड किस्मों में पकने से पहले 50 प्रतिशत फल झड़ने की समस्या भी पाई गई है।

फूलों व फलों के झड़ने का मुख्य कारण अधिक तापमान, शुष्क मौसम, पानी की कमी, भूमिगत पानी की सतह का ऊँचा होना, तेज हवा का चलना, हारमोंस में बदलाव, पोषक तत्वों की कमी, कीट व बिमारियों का प्रकोप, ओलावृष्टि इत्यादि माना गया है।

फलों के झड़ने की समस्या के समाधान के लिए आरयोफनजीन (20 पी.पी.एम.) + 2, 4-डी (10 पी. पी.एम) + जिंक सल्फेट (0.5 प्रतिशत) के तीन छिड़काव जो कि फल बनने के बाद, मई व इसके एक महीने के बाद करें। इसके लिए 12 ग्राम आरयोफनजीन + 6 ग्राम 2,4-डी + 3 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट को 550 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें लेकिन नींबूवर्गीय पौधों के आसपास कपास की फसल होने पर 2,4-डी का छिड़काव न करें।

फलों का फटना :

यह समस्या सर्वाधिक नींबू में व कभी-कभी माल्टा में भी पाई जाती है। फल लम्बाई में फटते हैं जिससे फलों की बिक्री में प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। फलों के फटने की समस्या मुख्यत: मौसम में अचानक बदलाव तथा पानी की कमी व अधिकता के कारण होती है। नींबू के फल बरसात के मौसम में सर्वाधिक फटते हैं। फलों के फटने की समस्या को कम करने के लिए नियमित हल्की सिंचाई व संतुलित खादों का प्रयोग करें।

कीट :

नींबू प्रजाति के पौधों पर कीटों का प्रकोप दूसरे फलों की अपेक्षा अधिक ही होता है। कम पैदावार होने के कई कारणों में से फसल पर कीट समस्या मुख्य है। कीट न केवल पैदावार में कमी करते हैं बल्कि फलों की गुणवता को भी बिगाड़ देते हैं। अत: नींबूवर्गीय फलों में लगने वाले मुख्य कीट, कीट की पहचान, जीवन-चक्र, नुकसान की पहचान व कीट नियंत्रण का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है।

नींबू का सिल्ला :

नींबू का सिल्ला नींबूवर्गीय वृक्षों का प्रमुख कीट है व इसका प्रकोप नींबूवर्गीय पौधों की सभी प्रजातियों में होता है। नींबू के सिल्ले के शिशु व प्रौढ़ दोनों ही हानि पहुंचाते हैं। प्रौढ़ का आकार छोटा व इसकी लम्बाई 3 मि.मी. होती है। इसके शरीर का पीछे का भाग ऊपर की ओर मुड़ा हुआ होता है। इसका रंग भूरा, सिर तीखा व हल्के भूरे रंग का होता है। पंख अर्ध पारदर्शी होते हैं तथा आगे के पंखों के आधे भाग पर भूरे रंग की पट्टी होती है। इसके शिशु का रंग नारंगी, चपटे व जूँ के आकर के होते हैं जो बड़ी संख्या व समूह में नये पत्तों, फूल व कलियों पर रहते हैं।

यह कीट पूरे वर्ष हानि पहुंचाता है। इस कीट के शिशु प्रौढ़ की अपेक्षा ज्यादा हानि पहुंचाते हैं। सर्दियों में इसका जीवन लम्बा होता है व ज्यादा सर्दी में केवल प्रौढ़ ही मिलते हैं। फरवरी-मार्च के महीने में प्रौढ़ अण्डे देते हैं। एक प्रौढ़ औसतन बादाम के आकार के नारंगी रंग के 500 अण्डे देता है। अण्डे प्राय: नींबूवर्गीय पौधों की नई फूट व पत्तियों पर दिए जाते हैं। अण्डे का आधार पौधों की कोशिकाओं में गढ़ा होता है। अण्डे अकेले या 2-3 अण्डों के समूह में दिए जाते हैं। एक स्थान पर अण्डों की संख्या लगभग 50 होती है जो 2-3 कतारों में दिए जाते हैं। गर्मियों में 4-6 दिन में व सर्दियों में 10-20 दिन में अण्डों से शिशु निकल आते हैं। हल्के पीले रंग के शिशु आधे खुले हुए पत्तों से रस चूसते रहते हैं। शिशु अपनी 5 अवस्थाएं 10-11 दिन में पूरी करता है। कीट के पनपने का सबसे उचित समय फरवरी व मार्च का महीना होता है। शिशु प्रौढ़ बनने पर पत्तों के नीचे चले जाते हैं। चार से आठ दिन बाद मादा अण्डे देना शुरू कर देती है। मादा का जीवन नर से काफी लम्बा होता है। इसका जीवन गर्मियों में 12-26 दिन व सर्दियों में 190 दिन का होता है। यह मार्च-अप्रैल व जुलाई-अगस्त के महीनों में सबसे ज्यादा नुकसान पहुंचाता है। एक वर्ष में इसकी 8-10 पीढ़ियां होती हैं।

यह नींबूवर्गीय पौधों का सबसे ज्यादा हानिकारक व मुख्य कीट है। सिल्ला के शिशु व प्रौढ़ नई टहनियों व पत्तों से रस चूसते रहते हैं। शिशु प्रौढ़ की अपेक्षा अधिक हानिकारक होते हैं। इसके प्रकोप से पैदावार व गुणों पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इसके ज्यादा प्रकोप से पत्ते, पत्तों की कोपलें व फूल सूखकर झड़ जाते हैं। पौधों की बढ़वार रूक जाती है व फल बहुत ही कम लगता है और वह भी बसंत ऋतु में झड़ जाता है। गर्मियों में इसके प्रकोप का प्रभाव सर्दियों में भी काले पत्तों व कमजोर वृक्षों के रूप में दिखाई देता है। सिल्ला के शिशु मीठा व गाढ़ा तरल पत्तों पर छोड़ते रहते हैं जिससे पत्तों पर फफूंद के पैदा होने से पत्ते काले हो जाते हैं जिससे पौधे की भोजन बनाने की क्षमता पर असर पड़ता है। ऐसा भी समझा जाता है कि यह कीट पौधों में जहरीला पदार्थ छोड़ता है जिससे फलों का आकार छोटा व इसमें रस की गुणवता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। यदि 2-3 साल तक समय पर कीट नियंत्रण न किया जाये तो पौधा मर भी सकता है।

कीट के नियंत्रण के लिए 750 मि.ली. आक्सीडेमेटान मिथाईल (मैटासिस्टोक्स) 25 ई.सी. या 625 मि.ली. डाईमिथोएट (रोगोर) 30 ई.सी. या 180 मि.ली.

फास्फेमिडीन (डाइमेक्रान) 85 डब्ल्यू.एस.सी. या 50 मि. ली. मोनोक्रोटोफास (न्यूवाक्रान/मोनोसिल) 36 डब्ल्यू. एस.सी. को 500 लीटर पानी में प्रति एकड़ के हिसाब से छिड़कें।

परागीकरण करने वाले कीटों की रक्षा हेतु फूल आने के समय कीटनाशक दवाओं का छिड़काव न करें। नींबू जाति के सभी वृक्षों व बाड़ की झाड़ियों पर छिड़काव करें।

नींबू की तितली (लैमन बटर फ्लाई) :

इस कीट की सुण्डी पत्तों को खाकर नुकसान पहुंचाती है। सुण्डी पीले हरे रंग की होती है जिसके पिछले भाग पर सींग के आकार की आकृति बनी होती है। सुण्डी की लम्बाई 40 मि.मी. व चौड़ाई 6.5 मि.मी. होती है। इसका प्रौढ़ एक बड़ी व सुन्दर तितली होती है जिसकी लम्बाई 28 मि.मी. व पंख फैलाने पर चौड़ाई 94 मि.मी. होती है। इसका सिर व मुंह काले रंग का होता है जिसके शरीर का नीचे का भाग सफेद पीले रंग का होता है। इसके पंख काले व उन पर सफेद निशान होते हैं।

नीबूं वर्गीय फलों की सूण्डी व तितली

नींबू की तितली मार्च के महीने में नई फूट व पत्तियों के नीचे 2-5 पांच अण्डों के समूह में अण्डे देती है। अण्डों का रंग शुरू में पीला हरा व बाद में गहरे भूरे रंग का हो जाता है। गर्मियों में 3-4 दिन व सर्दियों में 5-8 दिन बाद छोटी सुण्डी निकल आती है। सुण्डी का जीवन गर्मियों में 8-16 दिन व सर्दियों में 4 सप्ताह का होता है। इसकी सूण्डियाँ किनारों से मध्य सिरा तक खाकर नुकसान पहुंचाती है। सुण्डी बड़ी होकर पत्तों पर मध्य सिरा के पास सुस्त अवस्था में पक्षियों के बीठ के समान नजर आती है। सुण्डी के सिर के पिछले भाग पर लाल रंग की दो ग्रंथियां होती हैं जिससे गंध निकलती है जो शत्रु को दूर भगाने का काम करती है। पूरी विकसित अवस्था में सुण्डी पौधों से नीचे आकर सुरक्षा कवच बुनकर किसी भी सूखी शाखा व उठे हुए स्थान पर प्युपा बनाती है। प्युपा का जीवन 8-11 दिन का होता है। प्युपा से तितली सुबह के समय निकलती है। मादा प्रौढ़ 2-5 दिन के जीवन में 75-120 अण्डे देती है। नर का जीवन 3-4 दिन व मादा का जीवन एक सप्ताह का होता है। इस तितली की चार-पांच पीढ़िया प्रति वर्ष होती है। मार्च में निकली हुई तितली की सुण्डियों की संख्या अप्रैल के आखिरी सप्ताह में बढ़ जाती है। जून की गर्मी के कारण सुण्डियों की संख्या में कमी आ जाती है लेकिन जुलाई-अगस्त में इसकी संख्या फिर बढ़ जाती है जिससे इस सुण्डी का सबसे ज्यादा नुकसान सितम्बर के महीने में होता है। नवम्बर में सुण्डी से प्युपा बनकर यह अप्रैल तक शीत निष्क्रिय रहती है।

छोटी सूण्डियाँ नई टहनियों व नई पत्तियों को ही खाती हैं। पत्तियों को किनारों से मध्य सिरा तक खाती है। बाद की अवस्था में सुण्डी पुराने पत्तों को भी खा जाती है। अधिक प्रकोप होने पर पौधे पत्तियों रहित हो जाते हैं। इस सुण्डी का सबसे ज्यादा प्रकोप नर्सरी के पौधों पर होता है जो अप्रैल व अगस्त-सितम्बर में पौधों में नये फुटाव के साथ बढ़ जाता है। यह माल्टा को सबसे ज्यादा नुकसान पहुंचाती है। जहां तक सम्भव हो सुण्डियों व प्युपा को हाथ से नष्ट कर देना चाहिए व इसकी रोकथाम के लिए 750 मि.ली. एण्डोसल्फान (थायोडान/हिल्डान) 35 ई.सी. या 500 मि.ली. मोनोक्रोटोफास (न्युवाक्रोन/मोनोसिल) 36 डब्ल्यु.एस.सी. को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

नींबू का लीफ माइनर (सुरंगी कीड़ा) :

यह कीट नर्सरी के पौधों का हानिकारक कीट है। मुलायम पत्तों पर केवल सुण्डी ही चांदी की तरह चमकीली और टेढ़ी-मेढ़ी सुरंगे बनाकर नुकसान पहुंचाती है। सुण्डी 5.1 मि.मी., बिना पैर वाली, हल्के पीले व हरे रंग की होती है। इसका मुंह हल्के भूरे रंग का होता है। प्रौढ़ का आकार छोटा होता है जिसकी लम्बाई पंख फैलाने पर 4.2 मि.मी. होती है। आगे के पंखों पर भूरी धारियां व नोक पर काले उभरे हुए धब्बे होते हैं। पीछे के पंख सफेद व उनके किनारों पर बाल होते हैं।

यह कीट नये व मुलायम पत्तों पर पनपकर पूरे साल हानि पहुंचाता है। इसकी अलग-अलग अवस्थाओं का समय तापमान पर निर्भर करता है। गर्मी के महीनों में इसकी प्रजनन क्षमता सर्दी की अपेक्षा 5-6 गुणा ज्यादा होती है। प्रौढ़ छोटे, समतल व पारदर्शी अण्डे नई शाखाओं व पत्तों के नीचे मध्य सिरा के पास एक-एक करके देती है। एक पत्ते पर 2-3 अण्डे हो सकते हैं। दो से तीन दिन में अण्डे से बिना पैर की सुण्डी निकलकर सुरंग बनाना आरम्भ कर देती है व पूरा जीवन इसी सुरंग में व्यतीत करती है। सुण्डी 5-30 दिन में परिपक्व होकर मध्य सिरा

के पास सुरंग को चौड़ा बनाकर प्युपा की अवस्था में आ जाती है। प्युपा की अवस्था 5-25 दिन की होती है। प्रौढ़ सुरंग की दिवार को तोड़ कर बाहर निकल आते हैं जिन्हें जमीन की सतह के साथ पौधों के तनों पर देखा जा सकता है। यह कीट 12 से 55 दिन में अपना जीवन चक्र पूरा करता है व एक साल में लगभग इसकी 12 पीढ़ियां होती हैं।

यह नींबूवर्गीय पौधों के पत्तो को नुकसान पहुंचाने वाला एक प्रमुख कीट है। इसकी सूण्डियाँ, मुलायम पत्तियों के दोनों सतहों पर चांदी की तरह चमकीली और टेढ़ी-मेढ़ी सुरंगें बनाती हैं। प्रकोपित पत्तियों तथा टहनियां कुरूप होकर सूख जाती हैं। प्रकोपित पत्तियों पर फफूंदी व कोढ़ जैसी बीमारियां हो जाती हैं। इनका प्रकोप बसंत और मई से अक्तूबर के महीनों में ज्यादा होता है। यह प्रकोप मुलायम व रसदार पत्तियों पर अधिक होता है तथा नर्सरी में इसके प्रकोप से पूरा पौधा ही खराब हो जाता है।

750 मि. ली. आक्सीडेमेटोन मिथाइल (मैटासिस्टोक्स, 25 ई. सी.) या 625 मि. ली. डाईमेथोएट (रोगोट) 30 ई.सी. या 180 मि.ली. फासफेमिडान (डाइमेक्रान) 85 डब्ल्यू.एस.सी. या 500 मि.ली. मोनोक्रोटोफास (न्युवाक्रान/मोनोसिल) 36 डब्ल्यू.एस.सी. को 500 लीटर पानी में प्रति एकड़ के हिसाब से छिड़कें।

नींबू की सफेद मक्खी :

कीट के प्रौढ़ व शिशु दोनों ही हानिकारक हैं। प्रौढ़ का आकार बहुत ही छोटा (1.02-1.52 मि. मीटर) होता है। नर प्रौढ़ मादा से छोटा होता है। सफेद मक्खी की आंखें

लाल, पारदर्शी व गुर्दे के आकार की होती है। इसके पंख इसके शरीर से दुगनें से ज्यादा लम्बे होते हैं। इसके शरीर व पंख पर मोम जैसा सफेद रंग का चूर्ण जमा होता है। इसके शिशु का रंग हल्का पीला, आंखें बैगंनी व शरीर के किनारों पर बाल होते हैं। इसका प्युपा हल्का पीला, अण्डाकार व उस पर नारंगी पीले रंग की पट्टी होती है।

यह कीट पूरे साल पाया जाता है। प्युपा की अवस्था अक्तूबर से फरवरी और जून से जुलाई के महीनों में देखी जा सकती है। फरवरी के महीनें में प्युपा से प्रौढ़ निकलकर नये व मुलायम पत्तों के नीचे एक-एक करके अंडाकार हल्के पीले रंग के अण्डे देता है। मादा का जीवन 7-10 दिन का होता है। एक मादा अपने जीवन में 200 से भी ज्यादा अण्डे देती है। इस कीट का अधिक प्रकोप होने पर एक पत्ते पर 2000 से भी ज्यादा अण्डे देखे जा सकते हैं। मार्च-अप्रैल व अगस्त-सितम्बर के महीनों में सबसे ज्यादा

सफेद मक्खी द्वारा निकाली गई गोंद पर काली फफूदं

अण्डे देखे जा सकते हैं। 10-20 दिनों में अण्डे से लारवा निकलता है जो कुछ घण्टे चलने के बाद पत्तों के मुलायम भाग में अपना मुँह डालकर एक जगह से रस चूसता रहता है। शिशु का जीवन 25 से 71 दिन का होता है व बाद में प्युपा की अवस्था में आ जाता है। प्युपा की अवस्था सबसे लम्बी होती है जो बहुत ज्यादा गर्मी व बहुत ज्यादा ठण्ड में 114-119 दिन की होती है। प्रौढ़ सूर्य की रोशनी से दूर पत्तों के नीचे रहना पसंद करता है। यही कारण है कि पौधों के उत्तरी दिशा में इसकी सख्ंया ज्यादा मिलती है। मार्च से अगस्त तक इस कीट की सभी अवस्थाऐं देखी जा सकती हैं। हरियाणा प्रांत में साल में इस कीट की दो पीढ़ियां होती हैं।

इस कीट के शिशु व प्रौढ़ दोनों ही मुलायम पत्तियों से रस चूसते रहते हैं जिससे पत्तियां पीली होकर मुड़ जाती हैं तथा अंत में सूखकर गिर जाती हैं। शिशु का प्रकोप मार्च से अप्रैल व अगस्त से सितम्बर में ज्यादा होता है। शिशु के द्वारा निकाले गये गोंद पर काली फफूंद उत्पन्न होने से पौधों के भोजन बनाने की क्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

750 मि.ली. एण्डोसल्फान (थायोडान/हिल्डान) 35 ई.सी., 500 मि.ली. मोनोक्रोटोफास (न्युवाक्रान/ मोनोसिल) 36 डब्ल्यू.एस.सी. को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ के हिसाब से छिड़कें। बाग में पौधे घने नहीं लगाने चाहिए व पानी का निकास ठीक रखना चाहिए।

नींबू की काली मक्खी :

शिशु की अवस्था में यह कीट नींबूवर्गीय पौधों खासकर मीठा नींबू व मालटा में बहुत हानि पहुंचाता है। इसके प्रौढ़ का रंग नारंगी होता है जिसके पंख काले होते हैं। आगे के पंखों पर टेढ़े-मेढ़े निशान होते हैं। मादा मक्खी की लम्बाई 1.2 मि. मीटर व नर की लम्बाई 0.8 मि. मीटर होती है। इसके शिशु चमकीले काले रंग के होते हैं।

मार्च-अप्रैल के महीने में मादा प्रौढ़ चौड़े पत्तों पर पीले भूरे अण्डे चक्र क्रम में देती है। एक समूह में 15-22 अण्डे हो सकते हैं। 7-14 दिन में अण्डों से शिशु निकलकर रस चूसना शुरू कर देते हैं। शिशु की चार अवस्थाऐं 38-60 दिन में पूरी हो जाती है। पत्ते की सतह पर अण्डाकार

काले रंग का प्यूपा बनता है जिसके नीचे के भाग पर कांटे होते हैं। प्यूपे का जीवन 100 से 131 दिन का होता है। काली मक्खी की एक साल में दो पीढ़ियां होती हैं। प्रौढ़ की पहली पीढ़ी मार्च-अप्रैल के महीनें में व दूसरी पीढ़ी जुलाई-अक्तूबर में निकलती है।

शिशु व प्रौढ़ दोनों ही पौधों का रस चूसते हैं जिससे बढ़वार रूक जाती है। पत्ते मुड़ने शुरू हो जाते हैं। कलियां फूल बनने से पहले ही गिर जाती हैं। छोटे फल भी गिर सकते हैं।

750 मि.ली. एण्डोसल्फान (थायोडान/हिल्डान) 35 ई.सी., 500 मि.ली. मोनोक्रोटोफास (न्युवाक्रान/ मोनोसिल) 36 डब्ल्यू.एस.सी. को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ के हिसाब से छिड़कें। बाग में पौधे घने नहीं लगाने चाहिए व पानी का निकास ठीक रखना चाहिए।

तना छेदक कीट :

यह कीट नींबूवर्गीय पौधों के साथ-साथ आम, अमरूद, जामुन, मलबरी, अनार, बेर, लिची, आंवला और बहुत से जंगली व सजावटी पेड़ों को हानि पहुंचाता है। इस कीट की सुण्डी का रंग गंदा भूरा होता है जो बाद में पीला भूरा हो जाता है। इसका सिर गहरे भूरे रंग का होता है। सुण्डी की लम्बाई 50-60 मि.मी. की होती है। इसका प्रौढ़ पीले भूरे रंग का होता है जिसका मुंह व सिर बड़ा होता है। आगे के पंखों पर गहरी लाल भूरे रंग की पट्टियां होती हैं।

गर्मी का मौसम शुरू होते ही प्रौढ़ निकलने शुरू हो जाते हैं। मादा प्रौढ़ 15-25 अण्डे एक समूह में ढीली छाल में देती है। एक मादा 2000 तक अण्डे दे सकती है। 8-10 दिन में सुण्डी निकल आती है व छाल को कुतरना शुरू कर देती है। 2-3 दिन में सुण्डी छाल के अंदर प्रवेश कर सुरंग बनाती है। सुण्डी सुराख के मुंह व सुरंग के साथ-साथ जाला बनाती है जिसमें लकड़ी का बुरादा व सुण्डी का मल होता है। 9-11 महीनों में सुण्डी सुराख के अंदर ही प्यूपा की अवस्था में आ जाती है। 3-4 सप्ताह के बाद में सुराख बनाकर प्यूपा से प्रौढ़ निकल आता है। प्रौढ़ का जीवन छोटा होता है। इस प्रकार इसका जीवन चक्र एक साल में पूरा होता है व एक साल में इसकी एक ही पीढ़ी होती है जो जून-जुलाई से शुरू होती है।

यह कीट प्रायः दिखाई नहीं देता परंतु जहां पर टहनिंया अलग होती हैं, वहां पर इसका मल व लड़की का बुरादा जाले के रूप में दिखाई देता है। दिन के समय यह तने के अंदर सुरंग बनाती हैं और रात को छेद से बहार निकलकर जाले के नीचे रहकर छाल को खाती है एवं खुराक नली को खाकर नष्ट कर देती है जिससे पौधों के दूसरे भाग में पोषक तत्व नहीं पहुंच पाते हैं। बहुत तेज हवा चलने पर प्रकोपित टहनियां एवं तने टूट कर गिर जाते हैं। जिन बागों की देखभाल नहीं होती उनमें पुराने वृक्षों पर इसका आक्रमण अधिक होता है।

इस कीट के नियंत्रण के लिए सितम्बर-अक्तूबर माह में 10 मि.ली. मोनोक्रोटोफास (नुवाक्रान) 36 डब्ल्यू.एस. सी. या 10 मि.ली. मिथाइल पैराथियान (मैटासिड) 50 ई. सी. को 10 लीटर पानी में मिलाकर, सुराखों के चारों और की छाल पर लगाएं तथा फरवरी-मार्च माह में रूई के फोहों को दवाई के घोल में डुबोकर किसी धातु की तार की सहायता से कीड़ों के सुराख के अन्दर डाल दें एवं सुराख को गीली मिट्टी से ढ़क दें। घोल बनाने के लिए 40 ग्राम कार्बेरिल (सेविन) 50 घु.पा. या 10 मि.ली. फैनिट्रोथियान (फोलिथियान/सुमिथियान) 50 ई.सी. को 10 लीटर पानी में मिला दें। 10 प्रतिशत मिट्टी के तेल का इमलशन (एक लीटर मिटटी का तेल + 100 ग्राम साबुन + 9 लीटर पानी) भी लगा सकते हैं।

अथवा

कीड़े के प्रत्येक सुराख में निम्नलिखित दवाइयों में से किसी एक का पानी में बनाया गया 5 मि.ली. डाईक्लोरवास (नुवान) 76 ई.सी. या 5 मि.ली. मिथाइल पैराथियान (मैटासिड) 50 ई.सी., 30 मि.ली. एण्डोसल्फान (थायोडान/थायोटाक्स/एण्डोसेल) 35 ई.सी. को 10 लीटर पानी में मिलाकर लगाएं तथा इसके बाद सुराखों को मिट्टी से बंद कर दें।

ध्यान रहें कि आस-पास के सभी वृक्षों के सुराखों में भी इन दवाइयों का प्रयोग करें। बाग को साफ सुथरा रखें व निर्धारित संख्या से ज्यादा पेड़ न लगाएं। कीटनाशक दवाईयों का प्रयोग जाला हटाने के बाद ही करें।

दीमक :

यह एक प्रकार का सामाजिक कीट है जो सभी वृक्षों को भारी नुकसान पहुंचाता है। इसका ज्यादा नुकसान पौधों में या नये लगाये हुए पौधों में (जो नई व रेतीली जमीन में रोपे जाते है) होता है। शुष्क व अर्धशुष्क जलवायु इसके लिए लाभकारी होती है। ये कीट सूर्य की रोशनी पसंद नहीं करते। ये या तो जमींन में रहकर वृक्षों की जड़ों को खाकर तने को खोखला करते हुए उपर की और बढ़ते हैं अथवा पेड़ों की बाहरी सतह पर मिट्टी की सुरंग बनाकर इसके अन्दर रहकर छाल को खाते हैं। इसके कमेरों द्वारा जड़ों, छाल या बीच की लकड़ी की क्षति होने से वृक्ष सूखकर भर जाते हैं। दीमक से प्रभावित वृक्ष तेज आंधी से गिर जाते हैं। जीवित पौधों के साथ-साथ यह सूखी लकड़ी को भी नुकसान पहुंचाती है। सारा साल इनका प्रकोप बना रहता है लेकिन सर्दी व बरसात के समय यह प्रकोप कम हो जाता है।

खेत को साफ सुथरा रखें। कोई भी चीज जैसे ठूंठ, गली सड़ी, सूखी लकड़ी इत्यादि बाग में न रहने दें, जो दीमक के प्रकोप को बढ़ावा देती है। वृक्षों के आसपास गहरी जुताई करें व पानी दें जिससे दीमक का प्रकोप कम हो जाए। गोबर की कच्ची व हरी खाद प्रयोग में न लायें क्योंकि यह खाद दीमक को बढ़ावा देती है। जहां तक हो सकें रानी दीमक को नष्ट करें।

पौधे लगाने से पहले 50 मि.ली. क्लोरपाइरिफास 20 ई.सी., 5 लीटर पानी में प्रति पौधा (गड्ढ़े में) पौधे लगाते समय डालें। दवाई को डालने से पहले प्रत्येक गड्ढ़े में 2-3 बाल्टी पानी डाल दें। नये पौधे लगाने के बाद तथा लगे हुए पौधो में 1 लीटर क्लोरपाइरिफास 20 ई.सी. या 1 लीटर एण्डोसल्फान 35 ई.सी. प्रति एकड़ सिंचाई करते समय डालें। इस कीट को मारने की अपेक्षा यह अच्छा रहता है कि ऐसे उपाय किये जायें कि इस कीट का प्रकोप ही न हो।

फलन :

नींबूवर्गीय पौधे रोपाई के 3-4 वर्ष बाद फल देना आरम्भ करते हैं व 15-20 वर्ष तक अच्छी पैदावार देने योग्य रहते हैं। औसत पैदावार सातवें वर्ष से आरम्भ होती है। हरियाणा में माल्टा वर्ग के पौधों में फूल मार्च-अप्रैल में आकर फल सर्दियों में नवम्बर-दिसम्बर में पकते हैं। इस प्रकार फूल आने के लगभग 8-9 माह बाद फल मिलते हैं।

किन्नू के फल दिसम्बर में तैयार हो जाते हैं। इसके पके हुए फलों का रंग नारंगी हो जाता है। पके हुए फल बिना नुकसान हुए फरवरी तक पेड़ों पर छोड़ सकते हैं। परन्तु इसका अगली फसल पर बुरा प्रभाव पड़ता है। किन्नू का छिलका कुछ मोटा व चिपका हुआ रहने से इसके फल दूर-दूर तक भेजे जाने के उपयुक्त रहते हैं। ये 8-10 दिन तक खराब नहीं होते।

नींबू में वर्ष में दो बार फूल व फल लगते हैं। प्रथम बार फूल फरवरी मार्च में आकर फल अगस्त में तैयार होते हैं तथा द्वितीय बार फूल अगस्त में आकर फल जनवरी में तैयार होते हैं।

तुड़ाई व पैकिंग :

नींबू प्रजाति के फलों की तुड़ाई अलग-अलग किस्मों में फलों का खास रंग आने पर की जाती है। फलों की तुड़ाई कैंची या चाकू से काट कर की जाती है। फलों को तोड़ने के पश्चात उनको साफ करके फलों के आकार के अनुसार वर्गीकरण कर अलग-अलग टोकरों में भर दिया जाता है। फलों को आवश्यकतानुसार डिब्बों/टोकरी में भरना चाहिए। जैसे यदि फलों को दूर मण्डी में भेजना हो तो उन्हें लकड़ी के डिब्बों में तथा नजदीक की मण्डी के लिए बांस की टोकरी में भरना चाहिए। डिब्बे के अन्दर कागज की एक तह रखें या अलग-अलग फल को कागज में लपेटें। फलों को ठूंस-ठूंस कर नहीं भरना चाहिए अन्यथा ये खराब हो जाते हैं।

उपज :

नींबू प्रजाति की किस्मोंनुसार उपज अलग-अलग होती है। जैसे माल्टा में पाइन एप्पल 55-60 क्विंटल, जाफा 50-55 क्विंटल, ब्लडरैड 60-65 क्विंटल, मौसमी 35-40 क्विंटल प्रति एकड़ है। किन्नू की उपज 80-100 क्विंटल प्रति एकड़ व नींबू 50-55 किलोग्राम प्रति पेड़ है।

भण्डारण :

किन्नू को लकड़ी के डिब्बे में बंद करके तथा पोलिथीन के लिफाफों में डालकर बिना ऊर्जा भण्डारण कक्ष में रखा जाए तो 56 दिन तक आसानी से बिना किसी गुणात्मक बदलाव के रखा जा सकता है परन्तु इस दौरान इन लिफाफों को 15-30 मिनट तक प्रति सप्ताह खोल देना चाहिए ताकि उनमें से दुर्गन्ध तथा जमी हुई पानी की बूंदे निकल जाए। किन्नू के फलों को 7 दिन तक बिना किसी उपचार के कमरे के तापक्रम पर रखा जा सकता है। इनमें यदि 0.5 प्रतिशत कैप्टान के घोल (5 ग्राम कैप्टान प्रति लीटर पानी) या 2 प्रतिशत तिल के तेल (20 मि.ली. तिल का तेल + 2 मि.ली. टीपोल प्रति लीटर पानी) से उपचारित कर दिया जाए तथा अन्दर रखे हुए पेपर को डाइफिनाइल के घोल से सोख लिया जाये तो फलों को 21 दिन तक रखा जा सकता है। डाइफिनाइल का घोल बनाने के लिए 0.5 ग्राम डाइफिनाइल 10 किलोग्राम फलों के लिए उपयुक्त है, को ऐसीटोन में घोलकर इसमें पेपर भिगोकर छाया में सुखा लेना चाहिए।

फलों को कैल्शियम नाइट्रेट एक प्रतिशत + बाविस्टिन द्वारा उपचारित करने पर कमरे के तापक्रम पर भण्डारण करने से 42 दिन तक फलों को सड़ने से बचाया जा सकता है। बारामासी नींबू को हरी पकी अवस्था में तोड़ने पर उनकी भण्डारण क्षमता बरसाती मौसम में 7 दिन व सर्दियों में 14 दिन तक होती है। नींबू के फलों को 200 पी.पी.एम. जिब्रैलिक एसिड का उपचार तोड़ाई से पहले या तोड़ाई के बाद (फलों को 10 मिनट भिगोकर) करने से फलों को क्रमश: 28 तथा 35 दिन तक कमरे के तापक्रम में रखा जा सकता है।

फल परिरक्षण :

ज्यादातर नींबूवर्गीय फलों को पकने पर ताजा ही खाया जाता है फिर भी इन्हें जूस, सक्वैश, शरबत, मार्मलेड या अचार बनाकर भी इस्तेमाल किया जाता है। अत: घरेलू स्तर पर फल पदार्थ बनाने की विधि निम्नलिखित है।

ऑरेंज (संगतरा)/किन्नो स्कवैश :

पूरी तरह पके हुए संगतरों/किन्नों को धो कर छील लें तथा रस निकाल कर कपड़े से छान लें। रस (1 लीटर), चीनी (1.5 किलोग्राम), पानी 750 मि.ली. व 28-30 ग्राम साइट्रिक एसिड को मिला दें और जब तक चीनी पूरी तरह न घुल जाए उबालाते रहें व ठण्डा होने पर रस मिलायें। सोडियम बेन्जोएट (1 ग्राम) प्रति लीटर को थोड़े से पानी में घोलकर पूरे स्कवैश में मिला दें। इच्छानुसार खाने का रंग मिला दें। इसे छानकर कीटाणु रहित बोतलों में भरकर सील कर दें।

नींबू या लैमन स्कवैश :

पूरी तरह पके हुए नींबू लेकर धो लें तथा रस निकाल कर छान लें। चीनी (2 कि.ग्रा.) तथा पानी (250 मि.ली.) को मिला कर एक या दो उबाले दें, मैल उतार कर मोटे कपड़े से छान लें। एक लीटर रस को चाशनी में मिला दें। तैयार पदार्थ में पोटाशियम मैटाबाइसल्फाइट (700 मि.ग्रा.) प्रति लीटर, इच्छानुसार खाने का रंग व खुशबू मिला दें। इसे कीटाणु रहित बोतलों में भर कर सील कर दें।

नींबू का शरबत :

शरबत केवल शक्कर में सुरक्षित किया जाता है इसलिए इसमें चीनी की मात्रा कम से कम 65 प्रतिशत होनी चाहिए। शरबत बनाने के लिए चीनी (3 कि.ग्रा.) तथा पानी (500 मि.ली.) को मिलाकर थोड़ा गर्म कीजिए जिससे चीनी घुल जाये। इसे मोटे कपड़े से छान लें। एक लीटर रस को ठण्डी चाशनी में मिला दें। तैयार पदार्थ में सोडियम बेन्जोएट (0.5 ग्राम) प्रति लीटर, इच्छानुसार खाने का रंग व खुशबू मिला दें। इसे किटाणु रहित बोतलों में भर कर सील कर दें।

ऑरेंज मार्मलेड :

पूरी तरह पके हुए माल्टा और गलगल/लैमन को 2:1 अनुपात (2 कि.ग्रा. माल्टा : 1 कि.ग्रा. गलगल) या 2 संगतरों के लिए एक बड़ा नींबू लें। इन्हें धोकर सावधानी से छील लें। संगतरा या माल्टा को 1/3 से 1/4 भाग छिलकों को बहुत पतले व लम्बे आकार में काट कर 10 मिनट तक पानी में उबालें। छिले हुए संगतरों तथा गलगल/नींबू को टुकड़ों में काट कर आधा घण्टा तक पानी (टुकड़े ढ़क जाए) में उबालें। मोटे कपड़े से छान कर रस निकाल लें। रात भर रस को रख दें व अगले दिन साफ सुथरा रस निकाल लें। रस में पैक्टिन जांच लें। अधिक पैक्टिन वाले रस में चीनी की मात्रा बराबर रखें और मध्यम वाले में तीन चौथाई लें। रस में चीनी मिलाकर थोड़ा गर्म करें और चीनी घुल जाने पर छान लें। इसे तेज आंच पर गर्म करके गाढ़ा कर लें। पकने से थोड़ा पहले उबाल कर नरम किए गए छिलको को इसमें मिला दें। पदार्थ के पकने का पता शीट टेस्ट द्वारा लगाए। गर्म पदार्थ को कीटाणु रहित, साफ सुथरे जार में भर कर सील कर दें।

शीट टैस्ट के लिए उबलते हुए पदार्थ में चम्मच डुबो कर भरें और थोड़ा ठण्डा होने पर चम्मच को टेढ़ा करके बहने दें। यदि पदार्थ एक धार सी बांध कर बहने की बजाये शीट (तह) बना कर गिरता हो तो इसका मतलब है कि पदार्थ पक कर तैयार हो गया है।

पैक्टिन परीक्षण के लिए एक प्याले में एक चम्मच पका हुआ रस निकाल कर ठण्डा कर लें और इसमें दो चम्मच स्प्रिट अल्कोहल डालें। इस प्रकार रस में उपस्थित पैक्टिन जम जाएगी। यदि रस एक थक्के के रूप में जम जाए तो चीनी बराबर मात्रा में डालें। यदि रस 2 या 3 थक्कों के रूप में जमें तो चीनी तीन चौथाई डालें।

नींबू का अचार :

पके हुए फलों को धो कर प्रत्येक फल में चार कट लगाएं। इस प्रकार एक किलोग्राम फलों में 85-100 ग्राम नमक मिलाकर मर्तबान में भर दें। कुछ दिनों तक धूप में रख छोड़ें। इसमें गर्म मसाला भी मिलाया जा सकता है। कुछ दिन बाद नींबू नर्म हो जाएंगे व रंग हल्का भूरा हो जायेगा। यदि चाहें तो नींबू के साथ हरी मिर्च (एक कट लगाकर) तथा अदरक भी मिला सकते हैं।

सामग्री : नीबू 1 कि.ग्रा., नमक 120-200 ग्रा., काली मिर्च 10 ग्राम, लाल मिर्च 20 ग्राम, अजवायन 100 ग्रा., गर्म मसाला 30 ग्रा., गुड़ या चीनी की चाशनी 200 ग्राम।

कीट व व्याधि नियंत्रण मासिकी

महीना	दवाई	500 लीटर पानी में दवा की मात्रा	कीट व बीमारी
दिसम्बर-जनवरी	कॉपर आक्सीक्लोराइड	1.50 कि.ग्रा.	संतरा व माल्टा का कोढ, गूंद निकलने का रोग, तने व फलों का गलना।
फरवरी-मार्च (फूल खिलने से पहले)	मैटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. या रोगोर 30 ई.सी. या नुवाक्रोन 36 डब्ल्यूएससी + कॉपर आक्सीक्लोराइड	750 मि.ली. 625 मि.ली. 500 मि.ली. 1.5 कि.ग्रा.	निम्बू का सिल्ला, निम्बू का लीफ माइनर, कोढ रोग, टहनी मार रोग, गूंद निकलने का रोग।
अप्रैल	थायोडान 35 ई.सी. या नुवाक्रोन 36 डब्ल्यूएससी + कॉपर आक्सीक्लाराइड + जिंक सल्फेट	750 मि.ली. 500 मि.ली. 1.5 कि.ग्रा. 1.5 कि.ग्रा.	सिल्ला, लीफ माइनर, कोढ़ रोग, फल झड़ना, सुण्डी, जिंक की कमी
मई-जून	मैटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. या रोगार 30 ई.सी. या नुवाक्रोन 36 डब्ल्यूएससी + कॉपर आक्सीक्लोराइड + जिंक सल्फेट + यूरिया	750 मि.ली. 625 मि.ली. 500 मि.ली. 1.5 कि.ग्रा. 2.5 कि.ग्रा. 5.0 कि.ग्रा.	सिल्ला, लीफ माइनर स्कैब, जिंक व नाइट्रोजन की कमी
जुलाई-अगस्त	मैटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. या रोगार 30 ई.सी. या नुवाक्रोन 36 डब्ल्यूएससी + कॉपर आक्सीक्लोराइड + जिंक सल्फेट + यूरिया	750 मि.ली. 625 मि.ली. 500 मि.ली. 1.5 कि.ग्रा. 2.5 कि.ग्रा. 5.0 कि.ग्रा.	सफेद मक्खी, निम्बू की तितली, कोढ रोग, सिल्ला, लीफ माइनर, टहनी मार रोग, जिंक की कमी, नाइट्रोजन की कमी
सितम्बर	जिंक सल्फेट + कॉपर आक्सीक्लोराइड + थायोडान 35 ईसी	1.5 कि.ग्रा. 1.5 कि.ग्रा. 750 मि.ली.	फल का झड़ना, जिंक की कमी, लीफ माइनर, सिल्ला, सुण्डी
अक्तूबर	कॉपर आक्सीक्लोराइड	1.5 कि.ग्रा.	कोढ़ रोग

- रोग व कीट के लक्षण दिखाई देने पर ही छिड़काव करें।
- दवाई छिड़कने के 5 दिन तक फलों को न तोड़े।
- छाल खाने वाली सुण्डी के लिए कीटनाशक दवाइयों का प्रयोग जाला हटाने के बाद करें।
- कीट व बीमारी का प्रकोप एक साथ होने पर कीटनाशक तथा फफूंद नाशक दवा को मिलाकर छिड़काव किया जा सकता है।

Publications of Directorate of Extension Education, CCSHAU, Hisar

1. Herbicide Resistant *Phalaris minor* in Wheat – A Sustainability Issue
2. Major Weeds of Rice-Wheat Cropping System
3. धान-गेहूँ फसल-चक्र में समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन : वर्मीतकनीक
4. फसलों में खरपतवार नियंत्रण
5. भूँईफोड़/मरगोजा (आरोबेंकी इजिप्टियाका पर्स.) की तिलहनी तोरिया में ग्रस्तता एवं प्रबंध हेतु विकल्प
6. Broomrape (*Orobanche aegyptiaca* Pers.) Infestation in Oilseed Rapes and Management Options
7. Long-term Response of Zero-Tillage – Soil Fungi, Nematodes & Diseases of Rice-Wheat System
8. IPM Issues in Zero-Tillage System in Rice-Wheat Cropping Sequence
9. Zero Tillage – The Voice of Farmers
10. कृषि में विविधीकरण - खुम्बी उत्पादन का सफल प्रयास
11. Animal Production and Health : Frequently Asked Questions
12. Project Workshop Proceedings on Accelerating the Adoption of Resource Conservation Technologies in Rice-Wheat Systems of the Indo-Gangetic Plains, June 1-2, 2005
13. आंवला उत्पादन एवं परिरक्षण
14. Addressing Sustainablility Issues of Rice-Wheat Cropping System
15. ग्रामीण उत्थान में डेयरी का महत्त्व
16. ब्रायलर पालन
17. मधुमक्खी पालन - लाभदायक व्यवसाय
18. बेर - उत्पादन व परिरक्षण
19. ग्रामीण जैविक संसाधन - पशुपालन की भूमिका